**ओ३म्**

**‘ईश्वर, माता-पिता, आचार्य, वायु, जल व अन्न आदि देवताओं का ऋणी मनुष्य’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

मनुष्य इस संसार में पूर्व जन्म के प्रारब्ध को लेकर जन्म लेता है। माता-पिता सन्तान को जन्म देने व पालन करने वाले होने से सभी सन्तानें इन दो चेतन मूर्तिमान देवताओं की ऋणी हैं। माता अपनी सन्तान को दस महीनों तक गर्भ में रखकर उसे जन्म देने योग्य बनाती है, इससे उसे जो कष्ट होता है वह सन्तान पर उसका ऋण होता है जिसे सन्तान सारा जीवन उसकी आज्ञा पालन, सेवा सुश्रुषा करे तो भी आंशिक ही अदा कर सकता है। इसी प्रकार से पिता का भी अपनी सन्तान के जन्म व पालन, भोजन-छादन, शिक्षा दीक्षा में योगदान करने से दूसरा सबसे बड़ा ऋण होता है। सभी मनुष्य अपने आचार्यों से ज्ञान प्राप्त कर सत्य व असत्य सहित कर्तव्याकर्तव्य व उचित अनुचित का ज्ञान प्राप्त करते हैं। अतः इस ज्ञान के दाता होने से सन्तान अपने गुरूओं व आचार्यों के भी ऋणी होते हैं। यदि अच्छे आचार्य न मिलें तो मनुष्य पशुओं के समान ही होता है। सन्तान सहित इन तीनों माता-पिता-आचार्यों को उत्पन्न करने, सृष्टि की उत्पत्ति कर उसका संचालन करने तथा माता के गर्भ में सन्तान का निर्माण करने आदि के कारण सभी सन्तानें वा मनुष्य ईश्वर के भी ऋणी हैं। ईश्वर का ऋण तो ऐसा है कि जिससे सम्भवतः कोई कभी उ़ऋण ही नहीं हो सकता। यह भी सुखद आश्चर्य है कि ईश्वर एक ऐसी सत्ता है जो अपने किसी उपकार वा ऋण की आपूर्ति की अपने अमृत पुत्रों मनुष्यों से किंचित अपेक्षा नहीं करती तथापि हम सदा सर्वदा के लिए ईश्वर के ऋणी तो हैं ही।

ईश्वर, माता, पिता, आचार्य आदि चेतन देवता हैं परन्तु सृष्टि में अग्नि, वायु, जल व अन्न आदि मुख्य जड़ देवता हैं। इनसे भी हम जीवन भर लाभ लेते रहते हैं। अग्नि के बिना संसार के प्रायः सभी व अनेक कार्य ठप्प हो जायें। यह अग्नि हमारे शरीर में विभिन्न रूपों में विद्यमान है जिससे हमारा शरीर चलता है। प्रकाश भी एक प्रकार से अग्नि का ही एक परिवर्तित रूप है। सूर्य की अग्नि व ताप से ही हमारे अन्न, फल व ओषधियों आदि की उत्पत्ति होती है। चन्द्रमा के द्वारा ओषधियों व फलों में नाना प्रकार के रस भरे जाते हैं जिनके सेवन से हमारा शरीर स्वस्थ व बलवान बनता है। इसके बाद वायु पर विचार करें तो वायु हमारे जीवन का प्रमुख आधार है। पृथिवी के चारों ओर और ऊपर मीलों तक विद्यमान वायु ही हमारे प्राणों व जीवन का आधार है। यदि कुछ सेकेण्ड्स या मिनट, पल व क्षणों तक हमें शुद्ध वायु न मिले तो हमारा जीवन समाप्त हो जाता है। हम हर पल व क्षण, श्वास वा प्राणों द्वारा वायु लेते हैं अर्थात् शुद्ध आक्सीजनयुक्त वायु को लेते व अशुद्ध, विकृत व प्र प्रदुषित वायु जो कार्बन डाइआक्साइड की अधिक मात्रा लिये हुए होती है, उसे छोड़ते हैं। इससे हम ईश्वर द्वारा उत्पन्न वायु जो प्राणीमात्र के लिए है, उसे प्रदुषित कर एक प्रकार से प्रकृति व पर्यावरण को प्रदुषित कर उसके संचालन में बाधा उत्पन्न करते हैं। हमारा कर्तव्य बनता है कि हम जितनी वायु को अपने निमित्त से प्रदुषित करते हैं, उतनी वा उससे अधिक वायु को शुद्ध करें परन्तु हम न तो इसको जानने व उसके उपाय करने का प्रयास ही करते हैं और न ही हममें वैसी बुद्धि ही है। हमने देखा है कि आर्यसमाज में विद्वानों के प्रवचनों को सुनकर वा पुस्तकें पढ़कर लोग वायु शुद्धि हेतु किए जाने वाले यज्ञों के प्रति सहमत व सन्तुष्ट तो हो जाते हैं, परन्तु फिर भी अपनी प्रवृत्ति व अनेक अच्छे व अनावश्यक कार्यों से व्यस्त बनाये अपने जीवन में यज्ञ करने के समय व साधन एकत्र कर उसका अनुष्ठान करते नहीं दीखते। इसका कारण जो दृष्टिगोचर वा समझ में आता है, वह है कि हम अपने शरीर का अन्तः वा बाह्य मार्जन भली प्रकार से नहीं करते हैं। यदि हमारा अन्तःकरण शुद्ध, परिष्कृत वा मार्जित होगा तो हम निश्चय ही यज्ञ को न केवल जानने का प्रयास करेंगे अपितु जानकर उसका अनुष्ठान भी अवश्य करेंगे जिस प्रकार हम उन सभी कार्यों को करते हैं जिनसे हमें किसी न किसी प्रकार का प्रत्यक्ष लाभ दृष्टिगोचर होता है। हमारे विद्वान चिन्तन, मनन, तर्क व विवेचन सहित वेदादि शास्त्रों का अध्ययन कर यह भी निष्कर्ष निकाल कर हमें बताते हैं कि यदि हम उचित व आवश्यक मात्रा में प्रतिदिन वायु, जल, वर्षाजल आदि की शुद्धि नहीं करेंगे तो हम जन्म व मरण के चक्र से कभी भी छूट नहीं सकते। यज्ञ के अतिरिक्त यदि हम कुछ अन्य अच्छे कर्म करते हैं तो उससे वायु, जल, अन्न, अग्नि आदि का ऋण कम वा समाप्त नहीं हो जाता। इसके लिए तो हमें अवश्यमेव अग्निहोत्र यज्ञ करना ही होगा। यदि नहीं करेंगे तो हमने जितनी मात्रा में वायु, जल, अग्नि व अन्न आदि का उपभोग अपने मनुष्य जीवन में किया है, उसका जो ऋण हम पर बनता है, उसके परिणामस्वरूप ऋण चुकाने या भोग भोगने के लिए हमें बार-बार जन्म लेना ही होगा। हम यहां यह भी बताना चाहते हैं कि ईश्वर हमारे सभी असंख्य अर्थात् अनन्त पूर्व जन्मों में हमारा साथी रहा है और भविष्य के अनन्त सभी जन्मों में भी मित्र, सखा, पथप्रर्दशक व साथी रहेगा। वह एक पल के लिए भी हमें विस्मृत नहीं करता। हम उसकी स्तुति, प्रार्थना, उपासना करें या न करें, तथापि वह सभी का कल्याण कर सबको सुख देता है। **वह हमें अर्थात् एक सूक्ष्म चेतन पदार्थ जीव को मनुष्य जन्म देकर मानव और महामानव तक बना देता हैं, क्या हमें उसको स्मरण कर उसका धन्यवाद नहीं करना चाहिये?** प्रत्येक मनुष्य वा जीवात्मा को अपने उस सनातन शाश्वत सखा को न केवल जानना, स्मरण करना व कृतज्ञ ही होना चाहिये अपितु उसकी सेवा व आज्ञा पालन में अपना तन, मन व धन सब कुछ समर्पित कर देना चाहिये। यह समर्पण ही हमें जन्म-मरण से मुक्ति प्रदान करने में सहायक होता है। अतः प्रत्येक व्यक्ति अपने मत-मजहब-सम्प्रदाय को भूल कर ईश्वर के सच्चे स्वरूप को जानकर एक शाश्वत् व सनातन मित्र की तरह उस ईश्वर का स्वागत, सत्कार व उसका आतिथ्य करना चाहिये। **यह हमारे अपने लिए अति शुभ परिणामकारी होगा।**

अब इन सभी ऋणों से उऋण होने पर विचार करते हैं। ईश्वर का ऋण ईश्वरोपासना व उसके प्रति कृतज्ञता का भाव रखकर और साथ हि ईश्वर के दिये वेदों के ज्ञान का अध्ययन व उसका प्रचार व प्रसार कर चुकाया व कुछ कम किया जा सकता है। यह कार्य प्रत्येक मनुष्य के लिए धर्म व कर्तव्य के समान है व आवश्यक है। इसके लिए सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करना भी मनुष्य का धर्म व कर्तव्य है। महर्षि दयानन्द ने हमारी सहायता के लिए ईश्वरोपासना सम्पादित करने के लिए हम पर दया व करूणा प्रदर्शित करते हुए सन्ध्या की एक पुस्तक लिखी है जो अति महत्वपूर्ण है। समस्त वेद भाष्य का अध्ययन कर जो-जो कर्तव्य उसमें बतायें गये हैं उन सबका पालन करना उन्होंने मनुष्य का धर्म वा कर्तव्य बताया है। **माता-पिता के ऋण से उऋण होने के लिए हम क्या कर सकते हैं?** इसके लिए तो माता-पिता के प्रति समस्त जीवन कृतज्ञता की भावना व बुद्धि रखना, अपनी शक्ति व सामर्थ्य के अनुसार उनकी तन, मन व धन से सेवा करना, उनसे सद्व्यवहार करना, समय पर उन्हें भोजन कराना, उनके लिए वस्त्र आदि का प्रबन्ध करना व रोगों में उनके उपचार व स्वास्थ्य लाभ का प्रबन्ध करना आदि कार्यों को करके हम माता-पिता के ऋण को कम कर सकते हैं व कुछ सीमा तक उऋण हो सकते हैं। इसी प्रकार से हमारे आचार्यगण हमें जो ज्ञान देते हैं उनका भी हम पर ऋण होता है। उसके निवारणार्थ हमें उनके प्रति आदर व सम्मान की बुद्धि रखते हुए उनकी भी समय-समय देखभाल व उनका प्रिय करना चाहिये। इसके लिए उनकी जो भी उचित आवश्यकतायें हों, उन्हें पूरा करने का प्रयत्न करना चाहिये। इसका दूसरा प्रकार यह भी है कि ऐसे अन्य लोग जो आचार्य रहे हैं वा साधु-सन्यासी आदि होकर समाज, देश व विश्व के कल्याण की भावना से भ्रमण कर लोगों का उपकार करते हैं, उनकी अन्न, जल, वस्त्र सहित धन आदि से सेवा की करें। हमें स्वयं भी यथाशक्ति वैदिक ज्ञान अर्थात् सत्य का प्रचार व प्रसार करना उचित है। इससे हमारा अतिथि वा आचार्य ऋण कम होकर उतर सकता है। न केवल विद्यार्थी वा छात्र जीवन में ही आचार्यों व विद्वानों की संगति की जाती है अपितु गृहस्थी होकर भी इनकी संगति कर इनके ज्ञान व अनुभवों से लाभ उठाना चाहिये। यज्ञ के तीन प्रमुख अर्थों देवपूजा, संगतिकरण व दान में तो देवपूजा = विद्वानों का सम्मान तथा उनका संगतिकरण का साक्षात् विधान विद्यमान है। ऐसा करके ही जीवन यशस्वी व सफल होता है। इस देवपूजा व संगतिकरण से ही स्वामी दयानन्द ऋषि व महर्षि बने और उन्होंने विश्व का कल्याण किया। उन्होंने ज्ञान व विज्ञान का इतना दान किया है कि सृष्टि के अन्त अर्थात् प्रलय काल तक सारे संसार के मनुष्य व अन्य सभी प्राणी इससे लाभान्वित होते रहेंगे।

वायु, अग्नि, जल व अन्न आदि देवता जड़ होने पर भी ईश्वर द्वारा उनकों सौंपे गये कार्यों को बखूबी कर रहे हैं। इन सभी जड़ देवताओं के ऋण से उऋण होने के लिए ईश्वर ने वेद में मनुष्यों को यज्ञ करने की प्ररेणा व आदेश दिया है। ईश्वर की आज्ञा की पूत्यर्थ महर्षि दयानन्द सहित हमारे पूर्व ऋषियों व मनीषियों ने यज्ञ का विधान बनाकर हमें प्रदान किया है। हमें यज्ञ विज्ञान का अध्ययन कर उसका स्वयं पालन करने के साथ उसका प्रचार व प्रसार भी करना चाहिये जिससे हम इन सभी जड़ देवताओं के ऋण से उऋण हो सके। **हम यह भी समझते हैं कि आज के आधुनिक युग में संसार में यदि कोई श्रेष्ठ जीवन पद्धति है तो वह वैदिक जीवन पद्धति ही है जिसमें सभी सद्कार्यों को करने की छूट व असद्कार्यों से बचने व न करने का निर्देंश है।** यदि हम इस जीवन पद्धति को नहीं अपनायेंगे तो इसका अर्थ यह होगा कि हम जीवात्मा की अमरता व ईश्वर के शाश्वत् कर्म-फल विधान को विस्मृत कर रहे हैं। ऐसा करके हम जन्म जन्मान्तरों में दुःख के भागी होंगे। आईये, ईश्वरोपासना, दैनिक अग्निहोत्र देवयज्ञ, पितृयज्ञ, अतिथियज्ञ और बलिवैश्वदेवयज्ञ को करते हुए हम ईश्वर से मांग करें कि **‘‘हे ईश्वर दयानिधे ! भवत्कृपयानेन जपोपासनादिकर्मणा धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः।” अर्थात् ईश्वर हमारे जप, उपासना सहित अनेक कर्मों के अनुसार हमें धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की सिद्धि शीघ्र प्रदान करें।**

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**